International Interdisciplinary Conference on
Recent Research in Arts, Culture,
Literature, Languages, Philosophy,
Spirituality and Education

वर्तमान समय में ईशावास्योपनिषद् की प्रासंगिकता

डॉ० संजय कुमार झा
अध्यक्ष– संस्कृत विभाग,
द मदर्स इन्टरनैशनल स्कूल,
श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली –16
E-mail: sanjay_krjha@hotmail.com

वास्तव में मनुष्य विधाता की सुन्दरतम कृति है "पुरुषो वाव सुकृतम्"[1] मनुष्य जन्म दुर्लभ है। मनुष्य जन्म प्राप्त करना सौभाग्य की बात है[2] कहा जाता है कि बीस लाख जातियाँ स्थाविरों की थी। नौ लाख जातियाँ जलजों की थी। नौ लाख जातियाँ कछुआ सदृश जल–थल वासियों की थी। दश लाख जातियाँ पक्षियों की थी। बीस लाख जातियाँ चौपायों की थी। चार लाख जातियाँ वानरों की थी इतनी योनियों में से होकर मनुष्य मनुष्यत्व को प्राप्त कर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करता है।[3]

अतः लाखों उच्चावच योनियाँ पारकर मनुष्य जन्म मिलता है। इसलिए मनुष्य जन्म को सभी जन्मों से उत्कृष्ट माना गया है।[4]

क्या हम वर्तमान समय में इस विन्दु पर विचार कर रहें है, इस आपाधापी जीवन में हम केवल भौतिक सुख–सुविधाओं के प्रति इतना आसक्त हो गए है कि हम यह मान बैठे है, कि इन्द्रिया केवल भोगने का साधन मात्र है। ईशावास्योपनिषद् भोगने का विरोध नहीं करता अपितु भोगने की पद्धति का विरोध करता है, असीमित भोग विनाशकारी है। जैसे मृगमरीचिका मृग को लुभाती है, आकर्षित करती है, उसकी तृष्णा को निरन्तर बढ़ाती है परन्तु अन्ततोगत्वा विनाशकारी बन जाती है। उसी प्रकार सांसारिक भोग मनुष्य को लुभाते है, आकर्षित करते है। वे मनुष्य के लिए अकल्याणकारी और विनाशकारी बनें इसलिए ऋषियों ने "तेन त्यक्तेन भूंञ्जीथा"[5]

अर्थात् त्याग पूर्वक भोग करो, इस आदेश द्वारा भोगों को मर्यादित कर दिया। भोगो परन्तु इन भोगों में डूबे रहो यह कदापि उचित नहीं है। यही त्याग पूर्वक भोग करने का तात्पर्य है।

ईशावास्योपनिषद् धन प्राप्त करने का या एश्वर्य प्राप्त करने का कभी विरोध नहीं करता है, किन्तु कहता है कि यह धन सुपथ से प्राप्त हो ऐसी कामना की जानी चाहिए।[6] साथ ही हमारे ऋषियों व पूर्वजों ने हमेशा हमें लालच व तृष्णा से दूर रहना चाहिए "मा गृध"[7] अर्थात् लालच मत करो यह आदेश दिया। क्योंकि वे जानते थें कि धन किसी के पास स्थायी रुप से नहीं रह सकता।[8] इतना ही नहीं धन से कोई मनुष्य तृप्त भी नहीं हो सकता।[9] यह भी सच है कि धन से भौतिक इच्छाएँ तो पूरी हो सकती है, परन्तु धन से भरी सम्पूर्ण पृथिवी भी

1. ए० उप0– 1.2.3.
2. मानुषं दुर्लभं जन्म प्राप्तये यैर्मुनीश्वरः – नारद पुराण पूर्व भाग प्रथम पारा, 30, 19
3. स्थावरं विंशतेर्लक्षं, जलजंनवलक्षकम्
   कूर्माश्च नवलक्षं च दशलक्षं चं पक्षिणः
   त्रिशल्लक्षं पशूनां च चतुर्लक्षं च वानराः
   ततो मनुष्यतां प्राप्य, बह्मज्ञानं ततोऽम्यगत् – बृहद् विष्णु पुराण
4. अहोनृजन्माखिल जन्मशोभनम् (भागवत 5,13,21)
5. ईशावास्योपनिषद् – 1
6. ओं अग्ने नय सुपथा राये (ई० उ० 18)
7. (ई० उ०)
8. वही
9. न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः "कठ उप० 1. 27"
10. सर्वां पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्कथं तेनामृताः स्यामिति। नेति–होवाच याज्ञवल्क्य "2.4.2."
11. अमृतत्वस्य तु नाडशीन्त वित्तेनेति – बृ० उ०

मनुष्य[10] को शाश्वत ब्रह्मानन्द की प्राप्ति नहीं करवा सकती।[11]
अतः मनुष्य को कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की कामना करनी चाहिए ऐसा ऋषियों का आदेश है।[1]

देवों की भाँति कर्म करने से मनुष्य में "इदन्नमम" की भावना का विस्तार होता है। तभी वह दूसरों के सुख में अपना सुख और दूसरों के दुख को अपना दुख मानेगा। सबकी उन्नति में अपनी उन्नति और अपनी उन्नति में सबकी उन्नति समझेगा। तब उनके "स्व" अपनेपन का दायरा संकुचित न होकर विस्तृत हो जाएगा। जब वह अपने में सबको और सबमें अपने को देखने लगेगा तब जीवन में से शोक मोह नष्ट हो जायेगा। ब्रह्मानन्द सागर हिलोरें मारने लगेंगा।[2] मै मानता हूँ कि यह व्यवहार छूरे ही धार की तरह है किन्तु अगर हमें सुख–दूख से ऊपर उठना है तो इस ईर्ष्या द्वेष को प्रेम और मैत्री के द्वारा पाटने की कोशीश करनी पड़ेगी। क्योंकि एक ही परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है।[3]

परन्तु उस परमतत्व तक पहुँचने के विभिन्न मार्गो के अनुयायियों में परस्पर वैमनस्यरूप कैसा ? हिंसा व विध्वंस की भावना आज मानव मात्र में व्याप्त है। इसके मूल में स्वार्थपरता और भौतिकवादी सोच ही है। मनुष्य आज भौतिक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए न केवल लालायित रहता है, अपितु उन्हे येन केन प्रकारेण प्राप्त करना चाहता है। यहाँ तक कि इसके लिए हिंसक मार्गो को भी अपनाने से अपने आप को रोक नहीं पाता। वह भूल जाता है कि भौतिक वस्तुओं की उपलब्धियों में सच्चा सुख नहीं है। जो मानव मात्र के प्रति दया प्रेम–मैत्री और सौहार्द में है।

यह सम्पूर्ण सृष्टि उस परम परमात्मा की सुन्दर रचना है। मानव देह विनाशशील है। जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु निश्चित है जिसकी मृत्यु होती है उसका पुनर्जन्म निश्चित है। मानव शरीर भस्मान्त होने तक रहता है। इसलिए कार्य करने वाले मनुष्य प्रतिदिन सोने से पूर्व अपने किए हुए कार्यो को याद कर जिससे प्रतिदिन उसमें सुधार हो सकें।[4]

परम परमेश्वर को प्रतिदिन याद कर जो कुटिल पाप मार्ग हैं। उनसे स्वयं को पृथक् कर। सुपथ पर चल और श्रेष्ठ मानव बन यही ईशावास्योपनिषद् का संदेश है।

"तमसो मा ज्योतिर्गमय" तमस अंधकार से ज्योति की ओर ले चलो ?

"मृत्योर्माऽमृतं गमय" मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो। उपनिषद् के इस सूक्ति रसों का आलोक अनन्तकाल से मानव पथ को आलोकित करता रहा है। और भविष्य में भी करता रहेगा।

.....

1. कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविशेच्छतं समाः ई० उप० – 2
2. यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूतद्विजानतः
   तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः – ई० उप० – 7
3. ईशावास्यमिद् सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ई० उप० – 1
4. भस्मान्तं शरीरम् ऊं०। कृतो स्मर कृतं स्मर कृतं स्मर ई० उप० – 1
5. बृ० उ० – 13, 28

ISBN: 978-93-85822-91-9